भूत

धीरेंद्र अस्थाना

हिन्दी ADDA

भूत

इस भूत से वह और कितने दिनों तक अकेला ही टकराता रहेगा? क्या इस लड़ाई में अनीता को हिस्सेदार बनाया जा सकता है? यदि हाँ, तो भी अंततः उसे जूझना तो

https://www.hindiadda.com/bhoot/

अकेले ही पड़ेगा। अनीता राजदार तो बन सकती है, मगर हिस्सेदार कैसे बनेगी? हो यह भी सकता है कि राजदार बनते ही अनीता वह न रहे जो है और अगर ऐसा हुआ तो उसे अनीता के 'एस्केप' का शायद उतना मलाल नहीं होगा जितना इस बात से कि उसकी कायरता सहसा ही अपराध की संज्ञा में बदल गई है। अपराध जब तक दूसरे की जानकारी का हिस्सा नहीं बनता तभी तक शायद उसे कुछ मोहक नाम दिए जा सकते हैं- मसलन बुद्धं शरणं... उसने गरदन उठाई और आहिस्ता से बोला, 'सुनो, मैं एक बात...।'

लेकिन बात पूरी किए बगैर उसे रुक जाना पड़ा। अनीता जिस मुद्रा में उसे अपलक ताके जा रही थी उसके जारी रहते किसी भी नाजुक बात को पूरा करना संभव नहीं था। वह रुक गया।

'रुक क्यों गए**?**' अनीता ने उसी तरह देखते हुए कहा।

'फिर सही।' उसने जल्दी से कहा, 'चलो, चलें।'

'मुझे तुम पर क्रोध भी आता है और तरस भी। सुनो, तुम अपने-आपको बदल नहीं सकते**?**'

'मैं तुम्हारे क्रोध और तरस पर सिर्फ हँस सकता हूँ - एक बात। दूसरी बात यह है कि अपने-आपको बदलना क्या होता है, मैं नहीं जानता। चलो, अब चलें। तुम्हें आज घर नहीं जाना?'

'तुम क्या कह रहे थे उस समय?'

'कह नहीं रहा था, कहना चाह रहा था, पर मुझे लगता है कि अपना बहुत कुछ या कहूँ कि अपना सभी कुछ मुझे अपने साथ ही ले जाना होगा...।'

'तुम खुलते क्यों नहीं? क्या एक लंबे परिचय के बाद भी मैं इस काबिल नहीं हुई कि मुझ पर यकीन किया जा सके?'

'नहीं, वह बात नहीं है। मुझे लगता है, तुम झेल नहीं सकोगी।'

'तुम झेल सकते हो तो मैं भी...।'

'तुम्हारा भ्रम है। मैं भी नहीं झेल पा रहा हूँ। काश झेल पाता! पर यह संभव नहीं है। शायद आदमी की सहन-शक्ति से भूत की शक्ति ज्यादा बड़ी होती है।'

'भूत?'

'हाँ भूत, ...जो मेरे वर्तमान को खा रहा है।'

'मैं समझी नहीं।'

'कोई बात नहीं।' उसने कहा और उठ खड़ा हुआ। अनीता कुछ देर तक वैसे ही बैठी रही। चोटखाई। आहत। फिर तमककर उठी और तेजी से बाहर निकल गई। उसने काउंटर पर आकर दो चाय के पैसे दिए और धीरे-धीरे बाहर आ गया। उनके कदम परिचित रास्ते को नाप रहे थे, रोज की तरह। रेस्तराँ के एकदम बगल वाला पार्क बीच से पार करते हुए उन्हें दूसरी तरफ जाना था, जहाँ अनीता का बस-स्टॉप था। वह अपने सुस्त कदमों से रास्ता नाप रहा था और एक गहरी तकलीफ से उसका चेहरा तना हुआ था। उसके व्यवहार से अनीता आज फिर अपमानित हो गई थी। उसका मंतव्य यह नहीं था। लेकिन वह मजबूर था। वह आज तक नहीं सोच पाया कि अपने-आप में ऐसा कौन-सा परिवर्तन लाए जिससे अनीता सुखी हो सके? वह पूरी शिद्दत से चाहता है कि कम-से-कम कोई एक व्यक्ति ऐसा जरूर हो जो उससे जुड़कर अपने को सुखी अनुभव कर सके। वह व्यक्ति अनीता ही हो, वह यह भी चाहता है, पर...।

सहसा उसे रुक जाना पड़ा। अनीता ने अपना रुआँसा चेहरा उसकी बाँह पर रख दिया था।

'सुनो, ये क्या कर रही हो?' वह झुँझला गया, 'सीन क्रिएट हो जाएगा।'

अनीता अलग हट गई। उसे फिर दुख हुआ। उसने चलते-चलते ही उसकी हथेली दबाई और मधुर आवाज में बोला, 'प्लीज... मुझे गलत मत समझो। किसी भी दिन, जब चीजें हद से गुजर जाएँगी, मैं अपने-आपको खोल दूँगा।'

'कोई जरूरत नहीं।' अनीता ने सहसा ही तमककर कहा, 'मैं इस अजनबी रिश्ते को और नहीं ढो सकती। कल से मेरा इंतजार मत करना, मैं नहीं आऊँगी।' अनीता ने अंतिम वाक्य जोर से कहा और तेज-तेज कदमों से आगे बढ़ गई। वह खड़ा रहा। जब अनीता पार्क के अंतिम सिरे पर पहुँचने को हुई तो उसने चीखकर कहा, 'लेकिन मैं आऊँगा।'

अनीता ने मुड़कर देखा तो वह इस फिल्मी अंत पर मुस्कराया और सिगरेट सुलगाने लगा। सिगरेट का कश लेकर वह वापस मुड़ गया। अँधेरा तेजी से उतर रहा था। पार्क की घड़ी में सात बजे थे।

अचानक उसे लगा, उसका दम घुट रहा है। 'सुबह वाली स्थिति।' उसने चौंककर सोचा और झटके से अपना मुँह रजाई से बाहर निकाल लिया। टेबिल-लैंप का स्विच उसने लेटे-लेटे ही ऑन किया। कमरे में रोशनी होते ही उसे बड़ा अजीब-सा लगा। सुबह भी ऐसा ही हुआ था। वह उठकर बैठ गया। अटैंडेंस-रजिस्टर पर अपने दस्तखत ठोकने के बाद वह मिसेज पाठक की सीट के बगल से होता हुआ गुजरा था। मिसेज पाठक अपनी आदत के मुताबिक बोल-बोलकर अखबार पढ़ रही थीं। उनकी सीट के पास से गुजरते हुए उसने सुना, 'देहरादून के निकट ट्रेन दुर्घटना' और वह लड़खड़ा गया। देहरादून। उसे लगा, उसका दम घुट रहा है और वह अपनी सीट पर पहुँचने से पहले ही गिर पड़ा। जब तक लोग-बाग हड़बड़ा कर भागे और उसके इर्द-गिर्द एकत्र हुए तब तक वह उठकर अपनी सीट पर बैठ चुका था।

'ठोकर लग गई थी।' उसने अपनी ओर घूरती कई जोड़ी आँखों को जवाब दिया था और सिर झुका लिया था। जब तक लोग अपनी-अपनी सीटों पर चले नहीं गए, उसका सिर झुका रहा था। लोग उसकी चुप रहने की आदत से परिचित थे, इसलिए वह सहानुभूति या व्यंग्य-भरे जुमले सुनने से बच गया, वरना स्थिति बड़ी ऑड हो जाती। फिर दिन भर उसका मन उखड़ा उखड़ा ही रहा और अभी अभी उसे फिर लगा था, जैसे उसका दम घुट रहा है। माथे और चेहरे पर उसने पसीने का अनुभव भी किया और हृदय की धड़कन को असाधारण रूप से तीव्र भी पाया। कुछ देर वह उसी तरह बैठा रहा, फिर खाट से नीचे उतरकर टहलने लगा। क्या किसी दिन ऐसा भी हो सकता है कि उसका दम घुटने लगे, वह छटपटाता रहे, लोग नींद में डूबे रहें, अनीता सपनों में खोई रहे, नीचे चौकीदार घूमता रहे, रेडियो पर रखी घड़ी टिक-टिक करती रहे और वह मर जाए? अगले दिन शाम को साढ़े-पाँच से कब तक इंतजार करती रहेगी अनीता?

कब तक इंतजार किया होगा मीना ने? हो सकता है, उसने कुछ दिनों या महीनों बाद किसी और से विवाह कर लिया हो। दबाव तो उसके ऊपर तभी पड़ने लगा था। दो वर्ष की साँस-तोड़ कोशिशों और आहत चाहतों की धैर्यवान हिस्सेदार थी मीना। वह उसकी दो वर्ष लंबी बेकारी से भी ऊबी नहीं थी। उसने कहा था, वह उसके सफल होने तक इंतजार करेगी। सफल? वह हँसा। ठहाका लगा कर। लेकिन तुरंत ही इस अशिष्टता पर उसे अफसोस हुआ। शरीफ लोगों की कॉलोनी में रात के दो बजे इस तरह हँसना सौ प्रतिशत बेहूदगी थी। वह खाट पर बैठ गया। आहटों के प्रति संवेदनशील उसका मकान-मालिक सपरिवार बेहोश था शायद, वरना तुरंत ही चेतावनी देने चला आता, 'कमाल करदे हो तुसी। तुसी किस तरह दे पढ़े-लिखे बंदे हो? हुण सोण दा वेला है ते तुसी हँस रहे हो। तुवाडे वास्ते ऐ बड़ी शर्म दी गल है।'

उससे हमेशा ऐसी ही हरकतें होती रही हैं जिन पर शर्म आए। वह उदास हो आया और फिर चहलकदमी करने लगा। उसने हमेशा प्रयत्न किया है कि जाने... जाने कि वो कौन-सी वजहें हैं जो ऐन वक्त पर उसकी चेतना को दुर्बल, असहाय और डरपोक बना डालती हैं? उसने सोचा और बिस्तर में घुस गया। ठंड लगने लगी थी। लिहाफ को गरदन तक ओढ़कर उसने टेबल लैंप का स्विच ऑफ कर दिया। कमरे में घुप्प अँधेरा हो गया। सारी चीजें डूब गईं।

ऐसा ही घुप्प अँधेरा वह अपने दिमाग में चाहता है। इतना घना कि एक स्मृति उसे भेदकर न आ सके। कोई भी चित्र बनने से पहले मिट जाए, कोई भी आकृति उभरने से पहले डूब जाए। पर आकृति उभरती ही है, चित्र बनता ही है। बनता है और उसके मस्तिष्क के एक-एक बूँद रक्त को अपने बनने की प्रक्रिया में सोख ले जाता है।

ठीक यही क्षण होता है जब उसे लगता है कि उसका दम घुट रहा है, माथे पर, चेहरे पर पसीना चुहचुहा रहा है, पलकें थरथरा रही हैं, टाँगें लड़खड़ा रही हैं और आँखों के सामने का सब कुछ चक्कर खा रहा है। यह उसकी अनुपस्थिति का क्षण होता है। और इसी क्षण की भयावहता का अंदाजा लगा पाने में असमर्थ अनीता के लिए वह निर्मम, रुक्ष और असहाय हो जाता है, सैक्शन-ऑफिसर की नजरों में सिनिक और मिसेज पाठक की नजरों में हास्यास्पद बन जाता है। कौन बाँटेगा उसका दुख?

गम बढ़े आते हैं कातिल की निगाहों की तरह

तुम छुपा लो मुझे ऐ दोस्त गुनाहों की तरह।

कहीं 'टेप' पर कोई गजल सुन रहा है? रात के दो बजे, कौन है उसके आस-पास जो इस गजल को सुनता जाग रहा है? उसे आश्चर्य हुआ, सुकून भी मिला। पूरा सन्नाटा, पूरा अँधेरा, पूरा गम, पूरी स्मृति। वह बेआवाज चीखा। उसने चीखते हुए चाहा कि छत से एक ईंट टूटकर गिरे और सिर पर इस तरह लगे कि याद्दाश्त चली जाए।

पर, याद्दाश्त आदमकद होती जाती है। इस आदमकद स्मृति में एक आदमकद चेहरा उभरता है। यह माँ है।

'जल्दी आना।' माँ ने कहा था, और उसने जवाब दिया था कि वह गया और आया। उसके हाथ में माँ का मंगलसूत्र था जिसे औने-पौने दामों में बेचकर उसे लौटना था। उस समय रात के नौ बजे थे। मंगलसूत्र को किसी भी दुकान पर, किसी भी कीमत पर बेचकर उसे तुरंत लौटना था - माँ के पास। माँ, जो पिता के मृत शरीर के पास हैरान

खड़ी थी, आँखों में गहरा अविश्वास और चेहरे पर यंत्रणा के चिह्न लिए। वह भागा था - मंगलसूत्र बेचने, मीना को खबर देने और पिता के दोस्तों को बुला लाने के लिए। उसे जल्दी आना था - पिता का अंतिम संस्कार करने, दो छोटी बहनों और दो छोटे भाइयों को दिलासा देने, माँ को यह विश्वास दिलाने कि मकान का किराया उसी तरह दिया जाता रहेगा, भाई-बहनों की पढ़ाई उसी तरह जारी रहेगी, राशन का बिल उसी तरह जमा होता रहेगा, पिता द्वारा नारंग सेठ से पच्चीस प्रतिशत सालाना ब्याज की दर पर लिए गए छह हजार रुपयों की किस्तें उसी तरह जमा होती रहेंगी, पिता की बीमारी का बिल डॉक्टर गुप्ता को शीघ्र ही चुका दिया जाएगा, कपड़े वाले के तीन सौ पिचहत्तर रुपए जल्दी ही दे दिए जाएँगे और मीना को बहू बनाकर घर ले आया जाएगा। और इन सारी समस्याओं का एकमात्र हल फिलहाल वह इकलौता मंगलसूत्र था जो कभी चार सौ रुपए में खरीदा जाकर रात के नौ बजे किसी भी एक दुकान पर गिड़गिड़ा कर सौ रुपए में बिकना था। यह सात वर्ष पहले की बात है।

वह तेजी से उठ बैठा। लाइट जलाकर उसने दराज से नींद की गोली निकाली, मुँह में डाली, खाट के नीचे रखे गिलास से पानी पिया और लाइट बुझाकर, बिस्तर में घुसकर थर-थर काँपने लगा। काफी देर तक वह सोचता रहा कि उसको कँपकँपाहट ठंड से है या भय से, या वह कमजोर हो गया है?

सुबह जब आँख खुली तो नौ बजे थे। वह हड़बड़ा कर उठ गया। दफ्तर साढ़े नौ का है। बाजार जाकर चाय पीने और तब लैटरीन जाने का वक्त नहीं था। उसने पानी पीकर सिगरेट जलाई और कमरे से बाहर निकल आया।

लौटकर तैयार होने तक साढ़े नौ बज गए थे। नहाना और चाय आज के सुबह वाले कार्यक्रम से 'डिलीट' हो गए थे। दरवाजा बंद करने से पहले उसने कमरे की दशा देखी और घबरा गया। सब कुछ इस तरह अस्त-व्यस्त था जैसे किसी घमासान युद्ध का शिकार बना हो। दरवाजा बंद कर वह सीढ़ियाँ उतरने लगा।

'तुम्हारी अनगढ़ जिंदगी को मेरी जरूरत है।' मीना ने कहा था।

'हाँ।' उसने सपने में खोते और हकीकत से पिटते वर्तमान को महसूस कर जल्दी से कहा था। सचमुच, उसने चाहा था। कैसे? उसने सोचा था।

'आधा दृश्य तुम हो।' अनीता ने कहा था, 'और आधा दृश्य मैं हूँ।'

'ये दोनों आधे दृश्य मिलकर भी पूरे नहीं बन सकेंगे।' उसने अपने भीतर धज्जी-धज्जी होते ख्वाब को महसूस कर जबाब दिया था।

'क्यों?'

'मुझे लगता है मैं आधा दृश्य भी नहीं हूँ। पूरे दृश्य की स्मृति हूँ।'

'ओफ तुम्हारी फिलॉसफी!' अनीता ऊब गई थी। सब्र का आकार कितना बड़ा होना चाहिए - उसने सोचा था और थक गया था।

दफ्तर पहुँचते ही चपरासी ने बताया कि सैक्शन-ऑफिसर याद कर रहे हैं। उसने समय देखा, पौने ग्यारह होने को थे। उसने अटैंडेंस-रजिस्टर की ओर देखा, वह अपनी जगह नहीं था। लोगों की व्यंग्यात्मक नजरों से स्वयं को बचाते हुए वह सैक्शन-ऑफिसर मिस्टर कालिया के कमरे में प्रवेश कर गया। रजिस्टर वहीं था।

'यह लीजिए हमारी कंपनी का कोटेशन, जिसे तैयार करके आप इराक भेजने जा रहे हैं!' मिस्टर कालिया ने एक पीली-सी पतली फाइल उसके घुसते ही उसके मुँह पर दे मारी। वह झुका और जमीन पर गिर पड़ी फाइल को उठा, कोटेशन-लेटर्स देखने लगा।

'सॉरी सर!' माथे पर आए पसीने को पोंछते हुए उसने लड़खड़ाती जबान में कहा, 'मैं समझ नहीं पा रहा हूँ, यह कैसे हुआ? दुबारा तैयार कर देता हूँ।' जल्दी से पीछा छुड़ा कर वह जाने के लिए मुड़ा। उसकी टाँगें थरथराने लगी थी और जबान ऐंठने लगी थी।

'और सुनिए। यह सरकारी दफ्तर नहीं है। बी पंक्चुअल!'

'जी।' उसने कहा और बाहर निकल आया।

'मिस्टर हरीश, व्हाट हैप्पंड?' उसके बाहर निकलते ही मिस पांडे ने उससे तपाक से पूछा। उसने नजरें उठाईं और यह देखकर कि मिस पांडे की नजरों में उपहास नहीं है, आहिस्ता से बोला, 'आई वांट टु डाई। कैन यू हैल्प मी?'

मिस पांडे को सन्न छोड़ वह अपनी सीट पर जा बैठा। चपरासी से चाय लाने को बोलकर उसने अपना चक्कर खाता सिर कुरसी की पुश्त से टिका लिया। दिसंबर के इस ठिठुरे मौसम में उसका माथा पसीना छोड़ रहा था। चाय पीते हुए उसने देखा - कोटेशन लेटर पर उसने डॉक्टर गुप्ता का बिल एक सौ अस्सी रुपए, मकान का किराया दो सौ दस रुपए, नारंग सेठ की बकाया रकम चौंतीस सौ साठ रुपए और पिता के दाह-संस्कार के खाते में साढ़े तीन सौ रुपए भी दर्ज किए हुए थे। इस कोटेशन-लेटर

को इराक जाना था, ताकि उसकी कंपनी को ठेका मिल सके। उसने लेटर की चिंदी-चिंदी करके टोकरी में फेंक दी और सिगरेट सुलगाने लगा।

जब वह रेस्तराँ के सबसे कोने वाली अपनी परिचित मेज पर पहुँचा तो अनीता वहाँ बैठी थी। उसने बेहद फीकी मुसकान से अनीता को विश करते हुए पूछा, 'आ गईं?'

'दिख नहीं रही हूँ?' अनीता ने चहक कर जवाब दिया, लेकिन उसे लगा, अनीता ने हमला किया है। वह चुप, अनीता के सामने बैठ गया।

'मैं थक गया हूँ।' उसने उँगली से मेज पर एम बनाते हुए कहा, 'तुम मुझे छुपा सकती हो?'

'तुम्हारी नेचर से मेल नहीं खाता यह डायलॉग।'

'मेरी नेचर?' वह मुस्कराया और सहसा ही चौंक पड़ा। रेस्तराँ का गुरखा नौकर भीख माँगने वाली एक बूढ़ी औरत को, जो भीतर घुस आई थी, धक्के देकर बाहर निकाल रहा था। माँ - उसने सोचा और तीर की-सी तेजी से बाहर झपटा... वह औरत माँ नहीं थी।

'झल्ली है, साब!' गुरखा ने सूचना दी और वह वापस लौट पड़ा। उसकी दाईं कनपटी के पास वाली नस तेजी से उछलने लगी थी।

'क्या था?' अनीता हतप्रभ थी।

'हें?' वह चौंककर बोला, 'कुछ नहीं। चलो, यहाँ से चलें।'

'कहाँ?'

'चलो, मेरे घर चलो।'

'घर?'

'नहीं, घर नहीं, घर तो तुम्हारे बिना कैसे बनेगा? कमरे पर चलो।'

'पर साढ़े सात बजे तक मुझे अपने घर पहुँचना होता है।'

'तो?'

'यहीं बैठते हैं।'

वह फिर बैठ गया। सात वर्ष - उसने सोचा! पिछले साल भूत की उम्र छह वर्ष थी। उससे पहले पाँच वर्ष। उससे भी पहले चार वर्ष और सबसे पहला वह दिन जब भूत पैदा हुआ था। भूत हर साल बड़ा हो रहा है। क्या किसी दिन ऐसा भी होगा जब भूत का आकार उसके अपने आकार को छा लेगा। इस भूत को कद्दावर बनाते जाने में किस-किसकी आहों ने योग दिया होगा? कितने लोगों के विश्वास खंडित होने पर एक भूत का जन्म होता है? माँ ने क्या किया होगा? मीना ने क्या सोचा होगा? बंटी, बबली, राजू और सुनील किस तरह याद करते होंगे उसे? और नारंग सेठ, और डॉक्टर गुप्ता, और मकान-मालिक और खन्ना साहब और पिता के दोस्त और पिता का विश्वास!

'सुनिए।' वह मर्द होकर रोने लगा था, 'आप इस तरह धोखा नहीं दे सकते। यह गद्दारी है। फाउल है। नहीं, आप ऐसा हरगिज नहीं कर सकते। मुझे थोड़ी मोहलत और दीजिए, सुनिए, अच्छा मुझे पान की दुकान ही खुलवा दीजिए। प्लीज... मेरी बात सुनिए।' उसने गिड़गिड़ाकर कहा था। पर पिता के शरीर में कोई भी हरकत नहीं हुई थी।

'जल्दी आना!' माँ ने उसके हाथ में मंगलसूत्र देकर कहा था और उसने जवाब दिया था कि वह गया और आया। यह सात वर्ष पहले की बात है, जो सात ही वर्ष से कदम-दर-कदम उसका पीछा कर रही है। वह जानना चाहता है कि सात वर्ष पहले के इस दृश्य **(**जो उसकी स्मृति में जस का तस ठहरा हुआ है, जैसे फ्रीज हो गया हो**)** की स्थिति अब क्या है? कौन-कौन रुका होगा उसके इंतजार में?

'दुनिया तुम्हारे इंतजार में रुकी नहीं रहेगी, हरीश**!**' अनीता ने क्रोध से तमतमाते हुए कहा।

'और तुम**?**' उसने अपना चेहरा ऊपर उठाया और अनीता की आँखों में झाँकने लगा, शरारत से।

'मैं दुनिया से बाहर नहीं हूँ।' अनीता ने नजरें चुरा लीं। 'इतनी आत्मलीनता को कोई भी टॉलरेट नहीं कर सकता, मैं भी नहीं।'

'काश, मैं अपने भीतर से निकल सकता**!**' वह बुझ गया। उसने हथियार डाल दिए और सिगरेट सुलगाने लगा।

फिर वही रात। वही याद। वही जागरण। वही नींद की गोलियाँ। मौत। धोखा। बोधिसत्व। प्रेम। फर्ज। भाई। बहन। माँ। पिता। प्रेमिका। घर। दफ्तर। स्मृति। गलती। गुनाह। प्रायश्चित। भूत। कहाँ ठहर सकता है वह?

तुम तो अजेय थे। तुमने कहा था, 'ईश्वर मुझे उतने कष्ट नहीं दे सकता जितने मैं सहन कर सकता हूँ।' तो फिर? तुम हार कैसे गए? डॉ. गुप्ता का इलाज तुम जी-जान से करते रहे थे। तो फिर? तुम ठीक भी हो रहे थे। डॉक्टर गुप्ता ने कहा था कि अब तुम बच जाओगे और पुनः वही शक्ति, वही ऊर्जा हासिल कर लोगे जिसके दम पर तुमने ईश्वर को ठेंगा दिखाया हुआ था। तो फिर तुम अचानक नींद की गोलियाँ खाकर क्यों चल दिए? गद्दारी तो तुमने की थी। मैंने तो कमजोर और हतप्रभ क्षणों में एक बौराया हुआ निर्णय लिया था। सही है कि मैं घबरा गया था, मगर यह भी सही है कि मैंने कोई दावा भी नहीं किया था। तुमने तो दावे भी किए थे। परिवार और जिम्मेदारियों का विस्तार भी किया था। मैंने सिर्फ इतना किया था कि तुम्हारे विस्तार को स्वीकार नहीं किया। कर नहीं सका। मुझे मालूम है कि कई लोग मुझसे नफरत करते हुए मरेंगे या मरे होंगे, लेकिन इस नफरत का सिलसिला तुमसे आरंभ हुआ है। कारण तुम ही हो। सुनो। मैं सच्चे मन से कह रहा हूँ कि अपनी असहायता के इस अंतिम क्षण में भी मैं तुमसे नफरत कर रहा हूँ। तुम न भागे होते तो मैं भी न भागता। रास्ता तुमने ही बताया था। तुमने कहा, लड़ो और खुद भाग लिए। कैसे लड़ता मैं?

मैं नहीं जानता कि मीना ने इंतजार किया या विवाह कर लिया। माँ ने जहर खाया या युद्ध किया। मैं यह भी नहीं जानता कि उस रात तुम्हारा दाह-संस्कार हुआ भी या नहीं? मैं जानता हूँ उस भूत को जो तुम्हारे मरते ही पैदा हो गया था। जिसने पिछले सात वर्षों में मुझे खोखला कर दिया है। आज अपने-आपके लायक भी नहीं रह गया हूँ मैं। माँ ने कहा था, 'जल्दी आना।' मैं गया ही नहीं। उसकी अंतिम पूँजी, उसका मंगलसूत्र भी छीन लाया था मैं। जरा सोचो, पिछले सात साल से क्रमशः बड़े होते भूत से कौन लड़ेगा मेरे साथ? अपनी जलालत की शौर्य-गाथा किससे बयान कर सकता हूँ मैं?

यह मैं हूँ, क्रमशः दुर्बल होती चेतना और घने होते अपराधबोध के साथ। यह मेरा वर्तमान है। घायल। निरर्थक और वीतरागी। मेरा समाधान बन सकती हैं ये गोलियाँ, पर तुम्हारा समाधान ये नहीं थीं। नहीं ही थीं। पर तुमसे नफरत करते हुए भी तुम्हें क्षमा।

उसने देखा, वह अभी तक कमरे के बीचोंबीच खड़ा हुआ था। रात के ग्यारह बजे। सुबह से भूखा, मगर लड़ता हुआ।

जूते मोजों समेत वह बिस्तर में घुसा और ठहाका लगाकर हँस पड़ा। हँसता रहा। देर तक। वह चाहता था कि मकान मालिक आए और देखे कि दुनिया में इतने अशिष्ट लोग भी होते हैं जो जूते-मोजे पहनकर सो जाते हैं और इतने धाकड़ लोग भी होते हैं जो ठहाके लगाते हुए मर जाते हैं।

नींद की बची हुई दसों गोलियाँ उसने पानी के साथ सटक लीं और फिर ठहाके लगाने लगा। ज्यादा देर नहीं लगी। उसके कमरे का उढ़का हुआ दरवाजा चरमराया और खुल गया।

उसे मालूम था कि आने वाला शख्स मकान मालिक ही होगा। उसके होंठ टेढ़े हो गए। विद्रूप की तरह।

नहीं, भूत के पाँवों की तरह।

https://www.hindiadda.com/bhoot/